शिवताण्डवस्तोत्रम्

संस्कृत पद्य, व्याख्या तथा हिन्दी पद्य-गद्य सहितम्

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई-४.

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

रावणकृत-

शिवताण्डवस्तोत्रम्

वैयाकरणकेसरिवेदान्तदर्शनाचार्य-

धरणीधरशास्त्रिकृत

पदयोजनीटीका-विभूषितम्

आगरानिवासि-**पंडित रामेश्वरभट्ट** विरचित

संस्कृतव्याख्यया भाषापद्येनानुवादेन च सहितम्

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई-४.

संस्करण : जुन २०१३, संवत् २०७०

मूल्य : २५ रुपये मात्र

© सर्वाधिकार : प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers
Khemraj Shrikrishnadass
Prop: Shri Venkateshwar Press
Khemraj Shrikrishnadass Marg,
7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.khe-shri.com
E-mail : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj for M/s Khemraj Shrikrishnadass
Prop. Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400004,
at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate,
Pune -411 013.

प्रस्तावना

*

शंकरभक्तगण !

यह परमपावन, भूतभावन, चन्द्रचूड शंकरजी का स्तोत्र संस्कृतव्याख्या, भाषाछन्द और हिन्दीटीकासहित आपके विनोदार्थ प्रस्तुत है। यह वही स्तोत्र है कि, रावण ने जिसको रचकर और वारंवार जटाजूटधारी, कामारि, त्रिपुरारि, भोलानाथ शिवजी को सुनाकर अनुपम फल पाया था, अतएव इसकी उत्तमता स्वयं प्रकट है। यह जैसा दिव्य है तथा इसे पाठ करने में जो आनन्द आता है, वैसा ही यह अमोघ फल का दाता है और जैसा क्लिष्ट है, वह भी विदित ही है। इसलिये पाठकों के हित के लिये कल्याणपुरनिवासी परमधार्मिक श्रीयुत सेठजी गंगाविष्णु श्रीकृष्णदासजी की अनुमति से इस स्तोत्र की संस्कृत तथा हिन्दी टीका बनाकर पुनर्मुद्रणादि अधिकारसहित उनको अर्पण करता हूं। आशा करता हूं कि, महादेवजी के भक्तजन इसे पढकर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के भागी होंगे।

भाषानुवादक : रामेश्वरभट्ट
आगरा

शिवजी की आरती

कर्पूरगौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि।।

जय शिव ओंकारा, हर शिव ओंकारा।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव, अर्द्धाङ्गी धारा।।
ॐ हर हर हर महादेव।।
एकानन चतुरानन, पञ्चानन राजै।
हंसासन गरुड़ासन, वृषवाहन साजै।।
दोयभुज चारु चतुरभुज, दशभुज ते सोहैं।
तीनों रूप निरखताँ, त्रिभुवन जन मोहैं।।
अक्षमाला बनमाला, मुण्डमालाधारी।
चन्दन मृगमद चन्दा, भाले शुभकारी।।
श्वेताम्बर पीताम्बर, बाघाम्बर अंगे।
सनकादिक ब्रह्मादिक, भूतादिक संगे।।
करमध्ये च कमण्डलु, चक्र त्रिशूल धरता।
जगकर्ता दुखहर्ता, जगपालनकरता।।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव, जानत अविवेका।
प्रणवाक्षर (ॐ) मध्ये, ये तीनों एका।।
त्रिगुण स्वामी की आरती, जो कोई नर गावै।
भाव भक्ति के कारण, मनवांछित फल पावै।।
जय शिव ओंकारा, हर जय शिव ओंकारा।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव, अर्द्धाङ्गी धारा।।
ॐ हर हर हर महादेव।।

॥ श्रीः ॥

शिवताण्डवस्तोत्रम्

पदयोजनी-संस्कृतव्याख्या-छन्द-

हिन्दी टीका सहितम्

*****

जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले
गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम्।
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं
चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम्॥१॥

व्याख्या- जटेति। अयम् (यः शिवः) जटाटवीगलज्जल-प्रवाहपावितस्थले (जटा एव अटवी वनम् "अटव्यरण्यं विपिनं गहनं काननं वनम्" इत्यमरः। तस्या गलन् अधस्तात् पतन् यो जलस्य प्रवाहस्तेन पावितं पवित्रीकृतं स्थलं यस्य तस्मिन्) गले कण्ठे "कण्ठो गलोऽथ ग्रीवायाम्" इत्यमरः। लम्बिताम् लम्बायमानां भुजङ्गतुङ्ग-मालिकाम्(भुजङ्गानां सर्पाणां तुङ्गा उन्नता या मालिका ताम्)अवलम्ब्य धृत्वा डमड्डमड्डमड्डमन्निनादः शब्दस्तद्वान् डमरुर्यस्मिन् तत् प्रचण्ड-ताण्डवं भयङ्करनृत्यं चकार अकरोत् (सः) शिवो नोऽस्माकं शिवं (कल्याणं) तनोतु विस्तारयतु॥१॥

महादेवपदद्वन्द्वं निधाय हृदि सुन्दरम्।
शिवस्तोत्रस्य कुर्वेऽहं भाषाटीकां मनोहराम्।।

छंद- जटाविपिनतैं जल प्रवाह झरि किय पवित्र थल।
व्यालजालकी माल लम्बि अवलंबित वर गल।
डम डम डम डम नाद करत डमरू राजत बहु।
इमि शिव ताण्डव करत करहु कल्याणसु हम कहु।।१।।

भाषार्थ- जो शिवजी जटारूपी वन से गिरती हुई ऐसी गङ्गाजी के जलप्रवाह से पवित्र कण्ठ में लटकती हुई बड़े-बडे सर्पों की माला को धारण करके और डमड्‌ डमड्‌ शब्दवाले डमरु को बजाते हुए ताण्डव (नृत्य) करते हैं, वे भोलानाथ हमारा कल्याण करें।।१।।

जटाकटाहसंभ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरी-
विलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्द्धनि।
धगद्धगद्धगज्ज्वलल्ललाटपट्टपावके
किशोरचन्दशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम।।२।।

पदयोः- किशोरश्चासौ चन्द्रः स एव शेखरो मस्तकभूषणं यस्य तस्मिन्मम रतिः प्रीतिः प्रतिक्षणं क्षणं क्षणं प्रत्यस्तु भवतु। किम्भूते? धगद्धगद्धगदिति शब्देन ज्वलन् ललाटपट्टे पावकोऽग्निर्यस्य तस्मिन्। पुनः कीदृशे? जटा एव कटाहस्तस्मिन्संभ्रमेण वेगेन भ्रमन्ती चासौ। निलिम्पन्ते इति निलिम्पा देवाः। 'लिपि चित्रकरणे'। पचाद्यच्। प्रतिमासु निर्लिप्यन्त इति यावत्। तेषां निर्झरी नदी श्रीगंगा तस्या विलोला वीचयश्चञ्चला ऊर्मयस्ता एवं वल्लर्यो लतास्ताभिर्विराजमानो मूर्द्धा शिरो यस्य स तस्मिन् विश्वेश्वरे।।२।।

व्याख्या- जटेति। जटाकटाहसंभ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरीविलोल-वीचिवल्लरीविराजमानमूर्द्धनि (जटा एव कटाहस्तस्मिन् संभ्रमेण वेगेन भ्रमन्ती भ्रमणं कुर्वती या निलिम्पनिर्झरी निलिम्पानां देवानां निर्झरी नदी

गङ्गा तस्या विलोलाश्चञ्चला या वीचयस्तरङ्गास्ता एव वल्लर्यो लतास्ताभिः विराजमानः प्रकाशमानः मूर्द्धा मस्तकं यस्य स तस्मिन् धगद्धगद्धग-ज्ज्वलल्ललाटपट्टपावके (धगत् धगत् धगत् इत्यादि शब्देन ज्वलन् दीप्यमानो ललाटपट्टे मस्तकपीठे पावकोऽग्निर्यस्य स तस्मिन्) किशोर-चन्द्रशेखरे (किशोरो बालो यश्चन्द्रः किशोरचन्द्रः सः शेखरः शिरोभूषणं यस्य स तस्मिन्) शिवे मम रतिः प्रीतिः प्रतिक्षणं सर्वदा अस्तु॥२॥

छंद- जटाकटाहनु भूलि भ्रमति भागीरथि भ्राजै।
ताके तरल तरंग लतनुसौ मस्तक राजै॥
धक धक धक धक करति ज्वाल प्रज्वलित भालपट।
प्रतिपल हो मम प्रीति बालविधुशेखरकी घट॥२॥

भाषार्थ- जटा ही मानो कटाह (कराह) है, उसमें अधिक वेग से घूमती हुई जो निलिम्पनिर्झरी कहिये देवाङ्गना हैं, उनकी चञ्चल तरङ्गरूपी लता जिनके मस्तक में विराजमान हो रही हैं और जिनके ललाट में धक् धक् धक् इत्यादि शब्द करती हुई अग्नि जाज्वल्यमान हो रही है, ऐसे द्वितीया के चन्द्रमा को शिर पर धारण करनेवाले शंकरजी में मेरी प्रीति क्षण-क्षण में हो॥२॥

धराधरेन्द्रनन्दिनीविलासबन्धुबन्धुर-
स्फुरद्दृगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे।
कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि
क्वचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि॥३॥

पदयो- क्वचिद्दिगम्बरे दिशोऽम्बराणि यस्य तस्मिन् वस्तु वेदत्रय्या प्रतिपाद्ये ब्रह्मणि मे मम मनश्चित्तं विनोदं विगतं नोदं निश्चलम्। 'नुद प्रेरणे' अच्। एतु प्राप्नोतु। 'इण् गतौ'। किम्भूते ! कृपा एव कटाक्षः भ्रूविक्षेपस्तेषां धोरणी परम्परापंक्तिस्तया निरुद्ध, दुःखेन धर्तुंशक्या दुर्धरा आपदो दुःखानि येन तस्मिन्। स्वभक्तेषु कृपाकटाक्षेण दूरीकृता-पदीत्यर्थः। आपच्छब्दः सम्पदादिक्किबन्तः। पुनः धराधराणामिन्द्रस्य

हिमाचलस्य नन्दिनी सुता पार्वती तस्या विलासानां बन्धवः विलासबन्धवस्ते च बन्धुराश्चेति विलासबन्धुबन्धुरास्ते च स्फुरन्तश्च ते दृगन्ताश्च स्फुरद्दृगन्ताः। बन्धुरा अतिमनोहराश्चञ्चलाः कटाक्षास्तेषां सन्ततिः पंक्तिः तया प्रमोदमानं प्रसन्नं मनो यस्य एवंभूते इत्यर्थः॥३॥

व्याख्या- धरेति। धराधरेन्द्रनन्दिविलासबन्धुबन्धुरस्फुरद्दृगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे (धरायाः पृथिव्याः धराः पर्वतोस्तेषु इन्द्रो हिमालयस्तस्य नन्दिनी पुत्री तस्याः विलासानां बन्धवः बन्धुरा अतिमनोहराः स्फुरन्तश्च प्रकाशमाना ये दृगन्ताः कटाक्षास्तेषां सन्ततिः पङ्क्तिस्तया प्रमोदमानं हर्षयुक्तं मानसं मनो यस्य स तस्मिन्) कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि (कृपया दयायाः कटाक्षास्तेषां धोरणी परंपरा पङ्क्तिस्तया निरुद्धा दूरीकृता दुर्धरा दुःखेन धर्तुं शक्या आपत् विपत्तिर्येन स तस्मिन्) क्वचिद्दिगम्बरे कस्मिंश्चित् (दिशा एव अम्बराणि यस्य स तस्मिन्) वस्तुनि सदाशिवे इत्यर्थः। मम मनो विनोदम् आनन्दम् एतु प्राप्नोतु॥३॥

छंद- **पर्वतेन्द्रनन्दिनि विलासविधि बन्धु जु सुन्दर।**
लोचन कोरनु और लखैं मे मन प्रसन्नतर॥
जाकी कृपाकटाक्ष हरति अति आपति जनकी।
किहँसु दिगम्बर मांझ लग्न होवहु मम मनकी॥३॥

भाषार्थ- हिमाचलनन्दिनी श्रीपार्वतीजी के साथ सुन्दर विलास करनेवाले वे जिनके कटाक्षों से जिनका मन प्रसन्न हो रहा है और अपने कृपाकटाक्ष से निज भक्तों का जिन्हों ने दुःख दूर किया है, ऐसे किसी दिगम्बर सदाशिवजी में मेरा मन विनोद को प्राप्त हो॥३॥

जटाभुजङ्गपिङ्गलस्फुरत्फणामणिप्रभा-
कदम्बकुङ्कुमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे।
मदान्धसिन्धुरासुरत्वगुत्तरीयमेदुरे
मनो विनोदमद्भुतं बिभर्तु भूतभर्तरि॥४॥

पदयो- श्रीकृष्णभूतानां प्राणिनां स्थावरजङ्गमानां भर्ता पालकः। बिभर्तेस्तृन्। तथा चोक्तं गीतायाम्-"सुतपाम्यहमावर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च। अमृतश्चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन" इति। तस्मिन्मम मनोऽद्भुतं विनोदं क्रीडां बिभर्तु धारयतु। कथम्भूते? भूतभर्तरि मदेनान्धो मदान्धः स चासौ सिन्धुरासुरः मदान्धसिन्धुरासुरस्तस्य त्वगेवोत्तरीयं वस्त्रं तेन मेदुरः स्निग्धस्तस्मिन्। पुनर्जटासु ये भुजङ्गास्तेषां पिङ्गलाश्च ते स्फुरन्तः फणामणयः जटाभुजङ्गपिङ्गलस्फुरत्फणामणयस्तेषां प्रभास्तासां कदम्बः स एव कुङ्कुमद्रवः तेन प्रलिप्तानि दिग्वधूनां मुखानि येन तस्मिन् ॥४॥

व्याख्या- जटेति। जटाभुजङ्गपिङ्गलस्फुरत्फणामणिप्रभाकदम्बकुङ्कुमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे(जटानां भुजङ्गाः सर्पास्तेषां पिङ्गलाः पीतवर्णाश्च स्फुरन्त्यः विकासमानाश्च या फणास्तासां ये मणयस्तेषां प्रभाः तासां कदम्बः समूहः स एव कुङ्कुमद्रवस्तेन प्रलिप्तानि दिश एव वध्वः स्त्रियस्तासां मुखानि येन स तस्मिन्) मदान्धसिन्धुरासुरत्वगुत्तरीयमेदुरे (मदेन अन्धो यः सिन्धुरासुरो गजासुरस्तस्य त्वक्चर्म एव उत्तरीयमुपरिवस्त्रं तेन मेदुरः सुन्दरस्तस्मिन्) भूतभर्त्तरि (भूतानां स्थावरजङ्गमानां भर्ता पालकस्तस्मिन्) मम मनोऽद्भुतमाश्चर्यरूपं विनोदं क्रीडाविशेषं बिभर्तु धारयतु ॥४॥

छंद- जटनु भुजङ्गम जटित जासु मणि पीत प्रभागनु।
सोइ कुंकुमका कीच भली दिस तियमुख पह मनु॥
सोहत चर्म मदान्ध गजासुरकी जिनके तनु।
भूतनाथमहँ अद्भुत आनँद लहु मेरो मनु॥४॥

भाषार्थ- जटाओं में शोभायमान सर्पों के पीले और चमकते हुए फणों की मणिरूपी कुंकुम से दिशारूपी स्त्रियों के मुखों को लिप्त करनेवाले और मद से अन्धे गजासुर के चर्म के ओढने से शोभित ऐसे प्राणिमात्र के रक्षक सदाशिवजी में मेरा मन विचित्र आनन्द को प्राप्त हो॥४॥

ललाटचत्वरज्वलद्धनञ्जयस्फुलिङ्गया
निपीतपञ्चसायकं नमन्निलिम्पनायकम्।
सुधामयूखरेखया विराजमानशेखरं
महः कपालि सम्पदे सरिज्जटालमस्तु नः।।५।।

पदयो- कपालमस्यास्तीति कपालि महस्तेजो नोऽस्माकं सम्पदे नाम मोक्षायास्तु। कथम्भूतं कपालि महः? प्रसक्ता जटा जटालं तस्मिन्सरित् यस्य तत्सरिज्जटालम् पुनः किम्भूतं तत्? नमन्तो निलिम्पनायका यस्मिन् तत्। पुनः सुधामयानि मयूखानि यस्य स सुधामयूखश्चन्द्रस्तस्य रेखा तया विराजमानं शेखरं शिरोभूषणं यस्य तत्। पुनः कथम्भूतम्? ललाटमेव चत्वरं ललाटचत्वरं तस्मिन् ज्वलंश्चासौ धनञ्जयोऽग्निस्तस्य स्फुल्लिङ्गा कणा तया निपीतो नामाति-शयेन दग्धः पञ्चसायकः कामदेवो येन तत्।।५।।

व्याख्या- ललाटेति। ललाटचत्वरज्वलद्धनञ्जयस्फुलिङ्गया (ललाटमेव चत्वरं तस्मिन् यो धनञ्जयोऽग्निस्तस्य स्फुलिङ्गया कणिकया) निपीतपञ्चसायकम् (निपीतो निःशेषेण पीतो नाशित इति यावत्। पञ्चसायकः कामदेवो येन तत्) नमन्निलिम्पनायकम् (नमन् निलिम्पानां देवानां नायक इन्द्रो यस्मिन् तत्) सुधामयूखरेखया (सुधामयूखस्य चन्द्रस्य या रेखा तया) विराजमानशेखरम् (विराजमानं शोभमानं शेखरं यस्य तत्) कपालि (कपालमस्यास्तीति तत्) सरिज्जटालम् (सरिता गङ्गाया युक्तो या जटा साऽस्यास्तीति तत्) महस्तेजोरूपं (सदाशिवः) नोऽस्माकं सम्पदे धर्मार्थादिरूपसम्पत्तये अस्तु भवतु।।५।।

छंद- भाल अजिरकी अग्नि कणतु किय भस्म पञ्चशर।
देवेश्वर जिहि नमत सुधाकर रेख सुशेखर।।
करसौं कलित कपाल लसैं सुरसरित जटान्तर।
देहु सकल संपदा सोई हमको जु निरन्तर।।५।।

भाषार्थ- अपने मस्तकरूपी आंगन में जलती हुई अग्नि की चिन्गारी से कामदेव को भस्म करनेवाले तथा ब्रह्मादि देवताओं से नमस्कार किये गये और अमृतरूप किरणोंवाले चन्द्रमा की रेखा से जिनका मस्तक शोभित हो रहा है, वे कपाल को धारण किये और जिनके जटाजूट में गङ्गाजी शोभायमान है, ऐसे तेजरूप सदाशिवजी हमें धर्म आदि संपत्ति दें॥५॥

सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखर-
प्रसूनधूलिधोरणीविधूसराङ्घ्रिपीठभूः।
भुजङ्गराजमालया निबद्धजाटजूटकः
श्रिये चिराय जायतां चकोरबन्धुशेखरः॥६॥

पदयो- सहस्रेति। चकोराणां पक्षिविशेषाणां बन्धुस्तदानन्दकर्तृत्वात्स शेखरो यस्य स चकोरबन्धुशेखरः नोऽस्माकं श्रिये ब्रह्मविद्यातपोलक्ष्म्यै चिराय जायताम्। किम्भूतः? भुजङ्गानां राजानः भुजङ्गराजास्तेषां माला तया निबद्धो जाटजूटो येन, जटानामयं जाटः स चासौ जूटो जाटजूटो भुजङ्गराजमालया निबद्धजाटजूटकः। पुनः कीदृशः? सहस्रं लोचनानि यस्य स इन्द्रस्तत्प्रभृतयश्च तेऽशेषलेखास्तेषामिन्द्रादीनां देवानां ये शेखरा ब्रह्मादयस्तेषां यानि प्रसूनानि पुष्पाणि तेषां धूलयस्तासां या धोरणी तया विधूसरा अंघ्रिपीठभूर्यस्य सः॥६॥

व्याख्या- सहस्रेति। सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखरप्रसूनधूलिधोरणीविधूसरांघ्रिपीठभूः। (सहस्रलोचन इन्द्रः स प्रभृतिरादिर्येषां ते ये अशेषलेखाः सर्वदेवास्तेषां शेखराणां मुकुटानां प्रसूनानि पुष्पाणि तेषां धूलिनां रजसां या धोरणी पंक्तिस्तया विधूसरा लिप्ता अंघ्र्योश्चरणयोः पीठस्य भूर्यस्य सः) भूजङ्गराजमालया (भुजङ्गानां राजा वासुकिस्तस्य माला तया) निबद्धजाटजूटकः (निबद्धः सम्बद्धो जाटजूटो येन सः) चकोरबन्धुशेखरः (चकोराणां बन्धुश्चन्द्रः स शेखरः शिरोभूषणं यस्य सः) चिराय बहुकालं श्रिये चतुर्वर्गरूपसम्पत्तये जायताम् भवतु॥६॥

छंद- इन्द्र आदि सुरसीसमुकुट परि पुहुप परागनु।
धसर भय भुव पीठ पटलि पद धरत सुजगनु॥
सर्पराजका स्रजनु सज्यौ वर जटाजूट सम।
सदा श्रेयकर हो चकोरबांधव-शेखर मम॥६॥

भाषार्थ- इन्द्र आदि देवताओं के मुकुट में गुंफित पुष्पमालाओं के पराग से जिनके चरण धरने की भूमि धूसर वर्ण की हो रही है और सर्पराज की माला से जिन्हों ने जटाजूट बांधी है और जिनके मस्तक पर चन्द्रमा शोभायमान हैं, ऐसे शंकर हमें बहुत काल तक धर्म आदि चतुर्वर्ग दें॥६॥

करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वल-
द्धनञ्जयाहुतीकृतप्रचण्डपञ्चसायके।
धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रक-
प्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने रतिर्मम॥७॥

पदयो- करालेति। मम त्रिलोचने रतिः प्रीतिरस्तु। कथम्भूते त्रिलोचने? धराधरेन्द्रनन्दिन्याः कुचाग्रयोः चित्रकपत्राणां प्रकल्पने एकशिल्पिनि तस्मिन्। पुनः कथम्भूते? करालभालपट्टिकायां धगद्धगद्धगदिति शब्देन ज्वलन् चासौ धनञ्जयस्तस्मिन्नाहुतीकृतो नाहुतिराहुतिः कृतः, पञ्च सायकाः बाणा यस्य सः पंचसायकः। प्रचण्डश्चासौ पञ्चसायकः कामो येन स तथाभूतो महादेव इति॥७॥

व्याख्या- करालेति। करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वलद्धनञ्जयाहुतीकृतप्रचण्डपञ्चसायके (करालं भयङ्करं यद्भालं तदेव पट्टिका पीठस्तस्यां धगद्धगद्धगदिति शब्देन ज्वलन् धनञ्जयोऽग्निस्तस्मिन्नाहुतीकृतः प्रचण्डो भयङ्करः पञ्चसायकः कामदेवो येन स तस्मिन्) धराधरेन्द्रनन्दिनी-कुचाग्रचिपत्रकप्रकल्पनैकशिल्पिनि (धराधरेन्द्रस्य हिमालयस्य नन्दिनी पुत्री पार्वती तस्याः कुचाग्रे स्तनयोरग्रभागे चित्रवत्पत्रकं तिलकविशेषस्तस्य प्रकल्पने रचनाविशेषे एको मुख्यः शिल्पी चित्रकर्मा तस्मिन्) त्रिलोचने

(त्रीणि लोचनानि नेत्राणि यस्य स तस्मिन्) सदाशिवे मम रतिभूर्यात् ।।७।।

छंद- विकट भालवेदिका वह्नि बरि रहि धक धक धक।
दिय तिहि मध्य प्रचण्ड पञ्चशरकी आहुति भक।।
गिरिवरनन्दिनि उरज अग्र चित्राम चितेरे।
सोइ त्रैलोचन रूप माहिं रत हो मन मेरे।।७।।

भाषार्थ- अपने कराल विशाल भाल में धक् धक् धक् शब्द से लकहती हुई अग्नि में प्रचण्ड कामदेव को भस्म करनेवाले और हिमालय की कन्या पार्वती के कुचों के अग्रभागों में रंग से चित्रकारी करने में एक चतुर चितेरे, ऐसे तीन नेत्रवाले शंकर में मेरी प्रीति हो।।७।।

नवीनमेघमण्डलीनिरुद्धदुर्धरस्फुरत्-
कुहूनिशीथिनीतमः प्रबन्धबद्धकन्धरः।
निलिम्पनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्तिसुन्दरः
कलानिधानबन्धुरः श्रियं जगद्धुरन्धरः।।८।।

पदयो- नवीनेति। जगतस्त्रिलोक्याः धूः भारः तां धरतीति जगद्धुरन्धरः अस्माकं श्रियं तनोतु। कथम्भूतः? कलानिधीयन्ते स्थाप्यन्ते यत्रेति कलानिधानश्चन्द्रमास्तेन बन्धुरः सुन्दरः इत्यर्थः। पुनः कथम्भूतः? कृत्तिसुन्दरः। कृत्तिशब्देन मृगचर्म उच्यते। कृत्त्या सुन्दरः शोभां प्राप्त इत्यर्थः। पुन कथम्भूतः? निलिम्पनिर्झरी देवनदी, धरतीति धरस्तस्या धर इति कर्मणः शेषत्वविवक्षायां पचाद्यच्। पुनः कथम्भूतः? नवीना चासौ मेघमण्डली तया निरूद्धं नाम निबद्धं दुःखेन धर्तुं शक्यमिति दुर्द्धरं स्फुरत् भासमानमेवम्भूतं यत्कुहूनिशीथिनी-सम्बन्धि तमोऽन्धकारस्तस्य प्रबन्धो नैरन्तर्यं तेन बद्धा कन्धरा येन सः एवंभूत इति भावः।।८।।

व्याख्या- नवीनेति। नवीनमेघमण्डलीनिरुद्धदुर्धरस्फुरत्कुहू-निशीथिनीतमः प्रबन्धबद्धकन्धरः (मेघानां मण्डली मेघमण्डली नवीना

चासौ मेघमण्डली कादम्बिनी नवीनमेघमण्डली तयानिरुद्धं निबद्धं दुर्धरं दुःखेन धर्तुं शक्यं स्फुरत् प्रकाशमानं यत् कुह्वा अमावस्याया निशीथिन्या अर्द्धरात्रस्य तमस्तस्य प्रबन्धेन बद्धा कन्धरा ग्रीवा येन सः) निलिम्प-निर्झरीधरः(निलिम्पानां देवानां निर्झरी गङ्गा तां धरतीति) कृत्तिसुन्दरः (कृत्त्या मृगचर्मणा हस्तिचर्मणा वा सुन्दरः शोभायमानः) कलानिधान-बन्धुरः (कलानिधानश्चन्द्रस्तेन बन्धुरः शोभनः) जगद्धुरन्धरः (जगतः संसारस्य धुरं भारं धरीतीति) एवंभूतः सदाशिवो नोऽस्माकं श्रियं सम्पत्तिं तनोतु विस्तारयतु॥८॥

छंद- मेघनुकी नव घटा घिरकि कहु निशा निबिडतम।
ताकों किय इक ठांव कण्ठ छबि है जाके सम॥
गंगाधर गजचर्म चारु चन्द्रमा लसत वर।
करहु सोइ कल्याण नाथ मम जगत धुरन्धर॥८॥

भाषार्थ- नवीन मेघों के मण्डल के कारण कठिनता से पार जाने के योग्य और चमकते हुए ऐसे अमावस्या के अन्धकार के समान कण्ठवाले, देवगङ्गा को मस्तक पर धारण किये, मृगचर्म ओढने से शोभायमान, चन्द्रमा को धारण करने से परम सुन्दर ऐसे जगत् के भार को धारण करनेवाले शंकर हमारी सम्पत्ति को बढावें॥८॥

प्रफुल्लनीलपङ्कजप्रपञ्चकालिमप्रभा-
वलम्बिकण्ठकन्दलीरुचिप्रबद्धकन्धरम्।
स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं
गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदं भजे॥९॥

पदयो- प्रफुल्लते। अन्तको यमस्तं छिनत्ति यस्तमहं भजे सेवे। कीदृशम्? स्मरं छिनत्तीति स्मरच्छित् तमित्यर्थः। एवं पुरं त्रिपुरं छिनत्ति तथा तम्। पुनः भवं संसारं मखं दक्षयज्ञं गजं गजासुरं अन्धकं छिनत्ती-त्यादि चत्वारि विशेषणानि। पुनः किम्भूतम्? प्रकर्षेण फुल्लति 'फुल्ल

विकसने" प्रफुल्लश्च तन्नीलपङ्कजं च तत्। तस्य प्रपञ्चो विस्तारस्तस्य यः कालिमा नैल्यं तस्य या प्रभा तामवलम्बितुं शीलं यस्याः सा चासौ कण्ठकन्दली तस्या रुचिस्तया प्रकर्षेण बद्धा कन्धरा येनासौ प्रफुल्ल-नीलपङ्कजप्रपञ्चकालिमप्रभावलम्बिकण्ठेत्यादि।।९।।

व्याख्या- प्रफुल्लेति। प्रफुल्लनीलपङ्कजप्रपञ्चकालिमप्रभावलम्बि-कण्ठकन्दलीरुचिप्रबद्धकन्धरम् (प्रफुल्लनीलपङ्कजस्य विकसितनील-पद्मस्य यः प्रपञ्चो विस्तारस्तस्य कालिम्नः नीलतायाः प्रभावऽलम्बिनी प्रभां कान्तिम् अवलम्बितुं शीलमस्या अस्तीति या कण्ठकन्दली तस्या रुच्या प्रबद्धा प्रकर्षेण बद्धा कन्धरा ग्रीवा येन स तम्) स्मरच्छिदं (स्मरं कामदेवं छिनत्तीति तम्) पुरच्छिदं (पुरं त्रिपुरासुरं छिनत्तीति तम्) भवच्छिदं (भवं संसारं छिनत्तीति तम्) मखच्छिदं (मखो दक्षयज्ञस्तं छिनत्तीति तम्) गजच्छिदं (गजो गजासुरस्तं छिनत्तीति तम्) अन्धकच्छिदं (अन्तकः कालस्तं छिनत्तीति तम्) सदाशिवमहं भजे।।९।।

छंद- प्रफुल्लित नीले कमल कालिमा कांति कंठपर।
ताकी प्रभा प्रभास प्रबन्धित गल कन्दलिवर।
मार त्रिपुर गज यज्ञ अन्ध भवबन्ध विभेदन।
भजहु सदा सो शंभु कालहूके जे छेदन।।९।।

भाषार्थ- खिले हुए नीलकमल के विस्तार की श्याम की प्रभा के समान कण्ठ की सुन्दर कांति से शोभित ग्रीवावाले, कामदेव को भस्म करनेवाले, पुरदैत्य के नाशक, संसार के भय को काटनेवाले, दक्ष के यज्ञ को विनाश करनेवाले और गजासुर, अन्धकासुर और यमराज के नाशक, ऐसे शंकर को सदा भजता हूं।।९।।

अखर्वसर्वमङ्गलाकलाकदम्बमञ्जरी-
रसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम्।
स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं
गजान्तकान्धकान्तकं तमन्तकान्तकं भजे।।१०।।

पदयो- अन्तोऽवसानं तं करोति अन्तको यमस्तदन्तकं यमोऽपरान्मादृशान्नाशयति तन्नाशकमहं सेवे। कथंभूतं तम्। स्मरः कामस्तस्यान्तं करोति तथाभूतम्। एवं पुरभवयोरन्तं करोति तं पुर संज्ञकास्त्रिपुरानुयायिनो दैत्यास्तदन्तमित्यर्थः। आत्मस्वरूपप्रकाशत्वेन संसारनाशकश्च। तदुक्तं गीतायाम् "तेषां सत्त्वप्रयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्। ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते।।" इति। पुनः कथंभूतम्। यज्ञनाशकम्। 'गजासुरहरः' इत्यमराद्गजारिं नरकासुर-सूदनम्। पुनः क० अखर्वाः सर्वमङ्गलाः ताः कला विद्याः कदम्ब-मञ्जर्यः तासां रसप्रवाहस्तस्य माधुरी मधुरता तस्या विजृम्भणा विस्तारस्तस्य मधुव्रतो भ्रमरः सर्वविद्यारूपसमुदायस्य तत्त्वं जानातीति भावः। यथोक्तम्। "सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्वदेवमयो हरिः। सर्व-शास्त्रमयी गीता सर्वविद्यामयः शिवः" इति।।१०।।

व्याख्या- अखर्वेति। अखर्वसर्वमङ्गलाकलाकदम्बमञ्जरीरसप्रवाह माधुरीविजृम्भणामधुव्रतम्। (अखर्वम् अधिकं सर्वमङ्गलं यासु ताः कलाश्चतुःषष्टिविद्यास्ता एव कदम्बो वृक्षविशेषस्तस्य या मञ्जर्यस्तासां यो रसस्तस्य प्रवाहस्य या माधुरी मधुरत्वं तस्या विजृम्भणायाः स्फुटताया मधुव्रतो भ्रमरस्तम्। चतुःषष्ठिविद्यातत्त्वस्य ज्ञातारम्, यथोक्तम् "सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्वदेवमयो हरिः। सर्वशास्त्रमयी गीता सर्वविद्यामयः शिवः।।") स्मरान्तकम् (स्मरस्य कामदेवस्य अन्तकस्तम्) पुरान्तकम् (पुरस्य त्रिपुरासुरनामकस्य अन्तकस्तम्) भवान्तकम् (भवस्य संसारस्य अन्तकस्तम्) मखान्तकम् (मखस्य दक्षयज्ञस्य अन्तकस्तम्) गजान्तकम् (गजस्य गजासुरस्य अन्तकस्तम्) अन्धकान्तकम् (अन्धकस्य अन्धकनामकासुरस्य अन्तकस्तम्) अन्तकान्तकम् (अन्तकस्य कालस्य अन्तकस्तम्) एवंभूतं सदाशिवं भजे ।।१०।।

छंद- अधिक अखिल मंगला कला कदम्ब मंजरिय।
रसप्रवाह माधुरी पान करन मधुकर जिय।।

मार त्रिपुर गज यज्ञ अंध भवबन्ध विनाशन।

भजहुँ सदा तिहि शम्भु कालहूके जे नाशन॥१०॥

भाषार्थ- सम्पूर्ण मङ्गलों की देनेवाली ऐसी चौसठ कला और चतुर्दश विद्यारूपी कदम्बवृक्ष की मंजरी के रसप्रवाह की मधुरता चाखने में भ्रमररूप अर्थात् सब विद्याओं के ज्ञाता (जैसे कहा है कि-"सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्वदेवमयो हरिः। सर्वशास्त्रमयी गीता सर्वविद्यामयः शिवः॥") अर्थात् गङ्गा में सब तीर्थ हैं, भगवान् में सब देवता हैं, गीता में सब शास्त्र हैं और शिवजी में सब विद्याएं हैं) कामदेव, त्रिपुरासुर, संसार, दक्षयज्ञ, गजासुर, अन्धकासुर और यमराज इन सब के नाश करनेवाले, ऐसे शंकर को मैं भजता हूं॥१०॥

जयत्यदभ्रविभ्रम (द्) भ्रमद्भुजङ्गमश्वस-

द्विनिर्गमक्रमस्फुरत्करालभालहव्यवाट्।

धिमिं धिमिं धिमिं ध्वनन्मृदङ्गतुङ्गमङ्गल-

ध्वनिक्रमप्रवर्तितप्रचण्डताण्डवः शिवः॥११॥

पदयो- शिवो जयति। सर्वोत्कर्षेण वर्तते। कथम्भूतः? धिमिं धिमिं धिमिमित्याकारणे ध्वनन्यो मृदङ्गस्तस्य यस्तुंगो मङ्गलध्वनिस्तस्य यः क्रमस्तेन प्रवर्तितं प्रचण्डताण्डवं येन सः। पुनः किम्भूतः? अदभ्रा दीर्घा विभ्रमन्तो विलासवन्तो भ्रमन्तः, पवने भुजङ्गमाः सर्पास्तेषां श्वसन् प्राणस्तस्य यो विनिर्यमस्तस्य यः क्रमः तेन स्फुरन् भासमानः करालः भाले हव्यवाडग्निर्यस्येत्यर्थः॥११॥

व्याख्या- जयतीति। अदभ्रविभ्रमभ्रमद्भुजङ्गमश्वसद्विनिर्गमक्रम-स्फुरत्करालभालहव्यवाट् (अदभ्र उत्कष्टो यो विभ्रमो वेगस्तेन भ्रमन्तो ये भुजङ्गमा सर्पास्तेषां श्वसतः प्राणस्य यो विनिर्गमो बहिर्गमनं तस्य क्रमेण स्फुरन् प्रकाशमानः करालभाले भयङ्करललाटे हव्यवाट् अग्निर्यस्य सः) धिमिं धिमिं धिमिं ध्वनन्मृदङ्गतुङ्गमङ्गलध्वनिक्रमप्रवर्तितप्रचण्डताण्डवः (धिमिं धिमिं धिमिम् इत्यादि ध्वनन् शब्दं कुर्वन् यो मृदङ्गस्तस्य तुङ्ग उच्चैर्यो

मङ्गलध्वनिर्मङ्गलजनकशब्दस्तस्य क्रमेण प्रवर्तितं प्रकर्षेणारब्धं प्रचण्ड-ताण्डवं भयङ्करनृत्यं येन सः) शिवो जयति सर्वोत्कर्षेण वर्तते।।११।।

छंद- विपुल वेग विभ्रमति नाग निर्भर निस्वासत।
तिमि तिमि भाल कराल ज्वालकी झाल प्रकासत।।
धिमि धिमि धिमि धिमि ध्वनि मृदङ्ग मंगलिक महाकार।
निरतत अति परचण्ड सुनय जय जय सर्वोपरि।।११।।

भाषार्थ- जिनके भयंकर ललाट में अत्यन्त वेग से घूमते हुए सर्पों के श्वास निकलने के समान अग्नि प्रकाशमान हो रही है और धिमि धिमि धिमि इत्यादि शब्द करते हुए मृदङ्ग की बड़ी ऊंची मंगल ध्वनि के अनुसार (तांडव) नृत्य का आरंभ करनेवाले सदाशिव सब देवताओं के शिरोमणि हैं।।११।।

दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजङ्गमौक्तिकस्रजो-
र्गरिष्ठरत्नलोष्टयोः सुहृद्विपक्षपक्षयोः।
तृणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः
समप्रवृत्तिकः कदा सदाशिवं भजाम्यहम्।।१२।।

पदयो- दृषदिति। अहमेतेषु समप्रवृत्तिकः सन् समा प्रवृत्तिर्वर्तनं यस्यैवंभूतः सन् कदा सदाशिवं भजामि सेविताऽस्मि। वर्तमानसामीप्ये लट्। केष्वतो वदति। दृषत् पाषाणं विचित्रं च तत्तल्पं विचित्रतल्पं तयोः। भुजङ्गश्च मौक्तिकस्रक् च तयोः। पुनः कयोः? गरिष्ठमुत्तमं च तद्रत्नं गरिष्ठरत्नं लोष्टं मृत्पिण्डश्च तच्च तच्च ते तयोः सुहृन्मित्रम् विपक्षो रिपुस्तयोः पक्षयोः। तृणश्च अरविन्दवच्चक्षुषी यस्याः लक्ष्मीः तच्च सा च तयोरिति भुवः। पुनः कयोः? प्रजा सर्वजनः महीमहेन्द्रो राजा तयोः सम इति।।१२।।

व्याख्या- दृषदिति। दृषद्विचित्रतल्पयोः (दृषत् पाषाणः विचित्र तल्पं पुष्पविशेषनिर्मितशय्याविशेषस्तयोः) भुजङ्गमौक्तिकस्रजोः (भुजङ्गः सर्पः मौक्तिकानां स्रक् माला तयोः) सुहृद्विपक्षपक्षयोः (सुहृद् सखा

विपक्षः रिपुः तत्पक्षयोः) गरिष्ठरत्नलोष्टयोः (गरिष्ठं महत् रत्नं लोष्टं मृत्पिण्डश्च तयोः) तृणारविन्दचक्षुषोः (तृणं घासादि अरविन्दचक्षुः "अरविन्दं कमलमिव चक्षुषी यस्याः सा" कमलनेत्रा स्त्री तयोः) प्रजामहीमहेन्द्रयोः (प्रजा च महिमहेन्द्रः सम्राट् तयोः) समप्रवृत्तिकः (समा सदृशी भेदरहितेति यावत् प्रवृत्तिर्यस्य सः) सन् कदा कस्मिन् काले सदाशिवं भजामि सेविष्य इत्यर्थः॥१२॥

छंद- पाषाण रु परयंक सर्प सम मोतिन माला।
रत्न अमूलन तुल्य ढेल रिपु मित्र विशाला॥
तृण वारिज इक दृष्टि प्रजा अरु राजराजसम।
समझि भगहिंगे कबै सदाशिवको यौं ह्वै हम॥१२॥

भाषार्थ- पाषाण और विचित्र शय्या में, सर्प और मोतियों के हार में, अमूल्य रत्न और मट्टी के ढेले में. मित्र और शत्रु में, तृण और कमलसमान नेत्रवाली स्त्री में और प्रजा और पृथ्वीमण्डल के राजा में समान दृष्टि करके अर्थात् इनमें भेद न समझकर मैं शंकर को कब भजूंगा॥१२॥

कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन्
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमञ्जलिं वहन्।
विलोललोललोचनाललामभाललग्नकं
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम्॥१३॥

पदयो- कदेति। अहं शिव इति मन्त्रमुच्चारन् कदा सुखी भवामि। कथम्भूतं मन्त्रम्?विलोलश्च ताः लोलालोचनाश्च विलोललोल-लोचनास्तासु ललामं रत्नं पार्वतीरूपं तस्य भाले लग्नं भाललग्नमेव भाललग्नकम्। किम्भूतोऽहम् ? निलिम्पानां निर्झरी नदी तस्या निकुञ्जस्तस्य कोटरोऽन्तर्देशस्तत्र वसन्। पुनः कथंभूतोऽहम्? विमुक्ते दुर्मतिर्विमुक्तदुर्मतिः विमुक्ता दुर्मतिर्येनेति वा पुनः किं कुर्वन्सन्? सदा शिरःस्थमञ्जलिं वहन्सन् अञ्जलिं करद्वयसंयोगमित्यर्थः॥१३॥

व्याख्या- कदेति। निलिम्ननिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन् (निलिम्पानां देवानां निर्झरी नदी गङ्गा तस्या निकुञ्जो लतावृतस्थानं तस्य कोटरो मध्यप्रदेशस्तस्मिन्) वसन् निवासं कुर्वन् शिरस्थमञ्जलिं वहन् (शिरस्थम् अञ्जलिं करद्वयपुटरूपं सदा वहन् धारयन् सन्) विमुक्तदुर्मतिः (विमुक्ता परित्यक्ता दुर्मतिर्दुष्टा बुद्धिर्येन सः) विलोललोललोचनाललाम-भाललग्नकम् (विलोलाश्चञ्चला या लोललोचनाः लोलानि लोचनानि यासां ताः चञ्चलनेत्राः कमिन्यस्तासु ललामं रत्नं पार्वतीरूपमित्यर्थस्तस्य भाले मस्तके लग्नकम्) शिवेति मन्त्रमुच्चरन् (शिव इति मन्त्रमुच्चरन् उच्चारणं कुर्वन्) कदाऽहं सुखी भवामि॥१३॥

छंद- कब सुरसरित निकुञ्ज कुटी वसि दुर्मतिता तजि।
सदा सुशिर युग हाथ जोरि हरि हौं अंजलि सजि॥
लोललोललोचनिनु ललितके भाल लग्न ह्वै।
शिव शिव मंत्रहि रटत सदा मैं रहौं मगन ह्वै॥१३॥

भाषार्थ- देवगङ्गा के तीर पर लताभवन के भीतर निवास करता हुआ, शिर पर अंजलि बांधता हुआ, सदा दुष्टप्रकृति को त्याग करता हुआ और अत्यन्त चञ्चल नेत्रवाली स्त्रियों में जो रत्नरूप पार्वतीजी हैं, उनके ललाट में लिखे हुए शिव शिव इस मंत्र को उच्चारण करता हुआ, मैं कब सुखी होऊंगा॥१३॥

निलिम्पनाथनागरीकदम्बमौलिमल्लिका-
निगुम्फनिर्भरक्षरन्मधूष्णिकामनोहरः।
तनोतु नो मनोमुदं विनोदिनीमहर्निशं
परश्रियः परंपदं तदङ्गजत्विषां चयः॥१४॥

पदयो- निलिम्पेति। तदङ्गजत्विषां चयः नोऽस्माकं मनोमुदं तनोतु विस्तारयतु। कथम्भूतां मुदम्? अहर्निशं विनोदहेतुम्। कथंभूतः तदङ्गजत्विषां चयः? परश्रियः परं पदं परमलक्ष्म्याः परमाश्रयाः। पुनः

क०। निलिम्पनाथानां नागयहः तासां कदम्बः समुदायस्तन्मौलौ यो मल्लिकानां निगुम्फो ग्रन्थनं तस्मान्निगुफान्निर्भरं अतिशयेन क्षरद्मधु तेन मधुना य उष्णिका प्रस्वेदशोभा तया मनोहरः॥१४॥

व्याख्या-निलिम्पेति। निलिम्पनाथनागरीकदम्बमौलिमल्लिका-निगुम्फनिर्भरक्षरन्मधूष्णिकामनोहरः(निलिम्पानां देवानां नाथः स्वामी-न्द्रस्तस्यनागर्य्योऽप्सरसस्तासां कदम्बस्य समूहस्य मौलिषु शिरस्सु यानि मल्लिकानां पुष्पविशेषाणां निगुम्फानि गुच्छकानि तेभ्यो निर्भरात् बाहुल्यात् क्षरंति मधूनि पुष्पाणां धूलयस्तैर्या उष्णिका प्रस्वेद इति यावत् तया मनोहरः सुन्दरः) परश्रियः (परमलक्ष्म्याः) परं पदं (परमस्थानं) तद-ङ्गजत्विषां (तस्य महादेवस्य अङ्गेभ्यो जायन्त इति तदङ्गजास्त्विषः कान्तयस्तासाम्) चयः (समूहः) नः (अस्माकम्) विनोदिनीम् (हर्षोत्पा-दिकाम्) मनोमुदम् (हर्षं) तनोतु विस्तारयतु॥१४॥

छंद- इन्द्र अपसरा नीप मौलि मालती गुच्छ फबि।
झरत मधुर मकरन्द उष्णतातें अदभुत छबि॥
सबतै वर श्रय थान अंगते जनित तेज चय।
देहु अधिक मनमोद हमैं निशि दिन सो निश्चय॥१४॥

भाषार्थ- इन्द्र की अप्सराओं के शिरों में जो गुंथे हुए मल्लिका के पुष्पों के गुच्छे हैं, उनसे अधिक गिरते हुए परागों की गरमी से निकले हुए पसीने के कारण सुन्दर और परमशोभा का स्थान ऐसा शिवजी के शरीर की कांतियों का समूह हमारे हर्ष को बढानेवाली चित्त की प्रसन्नता को रात्रिदिन बढावें॥१४॥

प्रचण्डवाडवानलप्रभाशुभप्रचारिणी
महाष्टसिद्धिकामिनीजनाऽवहूतजल्पना।
विमुक्तवामलोचनाविवाहकालिकध्वनिः
शिवेति मन्त्रभूषणा जगज्जयाय जायताम्॥१५॥

पदयो- प्रचण्डेति। विमुक्ता चासौ वामलोचना श्रीपार्वती तस्या

विवाहकाले भवो ध्वनिः शिवेति मन्त्रः भूषणं यस्याः। पुनः क०। प्रचण्डश्चासौ वाडवानलः तापकत्वेन प्रचण्डवाडवानलवत् प्रभा येषां तानि प्रचण्डवाडवानलप्रभाणि एतादृशानि यानि अशुभानि तानि प्रचरितुं भक्षितुं शीलं यस्याः। पुनः क०। महाष्टसिद्धिरूपो यः कामिनीजनस्तेनावहूता स्वीकृता जल्पना कीर्तनं यस्याः सा तथाभूता विमुक्तवामलोचनाविवाहकालिकध्वनिर्जगज्जयाय कल्याणाय जायताम्॥१५॥

इति श्रीवैयाकरणकेसरिवेदान्तदर्शनाचार्यश्रीधरणीधरशास्त्रिकृता पदयोजनीटीका समाप्ता॥ शुभम्॥

व्याख्या- प्रचण्डेति। प्रचण्डवाडवानलप्रभाशुभप्रचारिणी (प्रचण्डो यो वाडवानलः समुद्राग्निस्तद्वत् प्रभाणि प्रकाशमानानियान्यशुभानि तेषां प्रचारिणी नाशनीति यावत्) महाष्टसिद्धिकामिनीजनावहूतजल्पना मङ्गलसूचकगीतिविशेषो यस्यां सा) शिवेतिमन्त्रभूषणा (शिवो महादेव इति मन्त्रो भूषणं यस्याः सा) विमुक्तवामलोचनाविवाहकालिकध्वनिः (विमुक्ता विशेषेण मुक्ता या वामलोचना सुनयना पार्वतीत्यर्थस्तस्याः विवाहकाले भवो ध्वनिः शब्दः) जगज्जयाय (जगतः संसारस्य जयो जगज्जयस्तस्मै) जायतां प्रादुर्भवतु॥१५॥

छंद- चण्ड अग्नि आकार अशुभ नाशनको जोहै।
अष्ट सिद्धि सँग तियनु मिली गावति जग सोहैं।
शिव शिवही है मंत्र जासु मंगलमय भूषण।
होहु सुनयनी गवरि व्याहकी ध्वनि जय पूषण॥१५॥

भाषार्थ- बड़ी प्रचण्ड समुद्र की अग्नि के समान प्रकाशित जो अमंगल हैं उनके नाश करनेवाली, अणिमा आदि जो आठ सिद्धियां हैं उनके साथ मिलकर स्त्रियों ने जिसमें मंगलसूचक भजन गाये हैं और शिव शिव इस मंत्र ही की जिसमें शोभा है, ऐसी मुक्तस्वभाव तथा सुन्दर नेत्रवाली पार्वतीजी के

विवाह की ध्वनि संसार की जय करे॥१५॥

पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं
यः शम्भुपूजनपरं पठति प्रदोषे।
तस्य स्थिरां मदगजेन्द्रतुरङ्गयुक्तां
लक्ष्मीं प्रसादसमये प्रददाति शम्भुः॥१६॥

व्याख्या- पूजेति। यो (मनुष्यः) पूजावसानसमये (शंकरपूजा-करणानन्तरकाले) दशवक्त्रगीतं (दश वक्त्राणि मुखानि यस्य स दशवक्त्रो रावणस्तेन गीतमुच्चारितं स्तोत्रमिति यावत्) शम्भुपूजनपरं (शम्भोः पूजनं तत् परं प्रधानं यस्मिन् कर्मणि तत्तथा) पठति (व्यक्त-वाचोच्चरति) शम्भुः (महादेवः) प्रसाद समये (प्रसन्नकाले) तस्य (नरस्य) मदगजेन्द्रतुरङ्गयुक्ताम् (मदयुक्ता गजास्तेषु इन्द्राः श्रेष्ठतमास्तुरङ्गा अश्वाश्च तैर्युक्तां सहिताम्) स्थिरामचञ्चलां लक्ष्मीं प्रददाति॥१६॥

छंद- जो मनुष्य मन लाय शम्भुसेवा पूरण करि।
पढहि जो यह दशशीश कह्यो सुस्तोत्र ध्यान धरि॥
ताकौं परम प्रसन्न होय शंकर करि निर्भय।
देत मत्त गज वाजिराजियुत संपति अक्षय॥१६॥

भाषार्थ- जो मनुष्य पूजा के अन्त में इस रावण के बनाये हुए स्तोत्र का पाठ मन लगाकर करता है, उसको महादेवजी मत्त हाथी, घोडे इनके सहित स्थिर लक्ष्मी देते हैं॥१६॥

दोहा

विधि हर हरि गणपति शिवा, गिरा चरण शिर नाय।
श्रीशिवताण्डवकी करी, भाषा छन्द बनाय॥१॥
लाल लाल लोचन ललित, सोह बाल शशि भाल।
हिमतनयाके प्राणप्रिय, हमपर होहु दयाल॥२॥

शिवताण्डवकी यह करी, भाषा ललित बनाय।
सुनहि सुनावहि जासु हिय, कमल वसहिं शिव आय।।३।।
गुण गवरीपतिके वदन. निधि शशि संवत जान।
चैत्र असित एकादशी, संपूरण यह मान।।४।।

इति श्रीआगरानगरवास्तव्यज्योतिर्विद्वालमुकुन्दभट्टसूरिसूनुरामेश्वरभट्ट विरचिताभ्यां संस्कृतव्याख्याभाषाटीकाभ्यां समन्वितं रावणकृतं शिवताण्डवस्तोत्रं समाप्तम्।।

*****

इदं हि नित्यमेवमुक्तमुत्तमोत्तमं स्तवं
पठन् स्मरन् ब्रुवन्नरो विशुद्धमेति सन्ततम्।
हरे गुरौ सुभक्तिमाशु याति नाऽन्यथा गतिं
विमोहनं हि देहिनां सुशङ्करस्य चिन्तनम्।।१७।।

*****

आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः।
सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वागिरो
यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम्।।१।।

*****

करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा
श्रवणनयनजं वा मानसं वापराधम्।
विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व
जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो।।

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५.
फैक्स -०२०-२६८७४९०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१.
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS